ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 303-304

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

ग्रामीण जीवन की व्यावसायिक गतिशीलता

सुषमा यादव
शोध अध्येत्री– समाजशास्त्र विभाग, शिब्ली नेशनल कालेज, आजमगढ़ (उ0प्र0), भारत

Received- 23.08.2020, Revised- 27.08.2020, Accepted - 30.08.2020 E-mail: - hemantkumarasthana1955@gmail.com

सारांश : *व्यवसाय की प्रकृति और स्वरूप का निर्धारण व्यक्ति के मूल्य, विचार, व्यक्तित्व और उसकी जीवन शैली के अनुसार होता है। यद्यपि मानव धन के लिए कार्य करता है, धन के बदले श्रम का भुगतान करता है, इस तरह व्यवसाय और आय को अलग नहीं किया जा सकता परन्तु आधुनिक समाज में व्यवसाय को केवल आय से न जोड़कर इसको मानव के रहन–सहन के स्तर के साथ सन्दर्भित कर इसके महत्व का आकलन दिया जा रहा है। वर्तमान युग में व्यवसाय प्रस्थिति, शक्ति और प्रतिष्ठा का प्रतीक बन गया है। प्रथमतः यह आय का स्रोत बनता है जो कि व्यक्ति की वर्ग स्थिति तथा जीवन शैली को निर्धारित करता है। व्यवसाय की प्रकृति व्यक्ति के समाज में प्रकार्यात्मक महत्व को भी स्पष्ट करती है। व्यवसाय का महत्वपूर्ण सम्बन्ध उच्चतम कार्यक्षमता, बुद्धिमत्ता, अनुभव, प्रशिक्षण, उच्चतर अधिकारों एवं सुविधाओं के ज्ञान से होता है। अन्ततः हम कह सकते हैं कि उच्चतम व्यावसायिक संलग्नता एवं उन्मुखता व्यक्ति को उर्ध्वाधर सामाजिक गतिशीलता का सूचक होता है (गोयल : 1973–74: 165–166)।*

कुंजीभूत शब्द– व्यवसाय, स्वरूप, निर्धारण, व्यक्ति, मूल्य, विचार, शैली, श्रम, भुगतान, व्यवसाय, आय, महत्व।

भारतीय एवं पाश्चात्य समाजशास्त्रियों ने अपने अध्ययनों के आधार पर व्यक्ति के जीवन में व्यवसाय के महत्व को दर्शाने की चेष्टा की है। इस सन्दर्भ में ह्यूज, मैकाइवर और पेज, डिसूजा, शर्मा, निझावन, गोयल, विताई, ब्रूम, मर्फी एण्ड मारिस, आर० पाण्डेय तथा मवलेलैंड के नाम उल्लेखनीय है ह्यूज के अनुसार व्यक्ति का कार्य उसके जीवन शैली को उसी हद तक प्रतिबिम्बित करता है जिस हद तक उसके सामाजिक अस्तित्व और तादात्मीकरण को (ह्यूज : 1958:7)। मेकाइवर तथा पेज के अनुसार व्यक्ति की सामाजिक वर्ग स्थिति महत्वपूर्णरूप से उसके व्यवसाय से निर्धारित होती है (मेकाइवर तथा पेज : 1962:390)।

गोयल के अनुसार व्यवसाय की प्रकृति तथा स्वरूप व्यक्ति के मूल्यों विचारों तथा उन्मुखताओं को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं (गोयल:1968:207)। व्यक्ति भले ही व्यवसाय से उत्पन्न होने वाले पैसे तथा आमदनी के लिए कार्य करता है, परन्तु ब्रूम के अनुसार आय आर्थिक तथा जीविकोपार्जन सम्बन्धी उपलब्धियों के अतिरिक्त उसके सामाजिक पद और स्थिति को भी प्रदर्शित करती है (ब्रूम : 1964 :30)। यही नहीं, व्यवसाय समाज में पद प्रतिष्ठा और सम्मान का भी सूचक है (बिताई : 1969 :, शर्मा : 1967:10:, निझावन : 1971:317–324)। मर्फी और मारिस के विचार से प्रतिष्ठित माने जाने वाले उच्च व्यवसायों का तादात्मीकरण उच्च अधिकारों एवं सुविधओं के साथ किया जाता है (मर्फी एण्ड मारित :1961–383)। आर० पाण्डेय के अनुसार व्यक्ति के सामाजिक मूल्यों के निर्धारण में व्यवसाय महत्वपूर्ण कारक के रूप में कार्य करता है। समाज में व्यक्ति जो एक–दूसरे के प्रति धारणा बनाते हैं वह उनकी भिन्न–भिन्न व्यवसायों के प्रति चेतना से प्रभावित होती है (पाण्डेय : 1974 : वाल्यूम 35 नं० 2)। व्यक्ति की व्यावसायिक महत्वाकांक्षाएं उसकी उपलब्धि पूर्वीभिमुखता, जो आधुनिकीकरण का एक अंग है को भी निर्धारित करती है (मैकले लैंड : 1961)। व्यवसायगत विशेषताएं व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण करने के साथ ही साथ चरित्र का भी निर्धारण करती है, अर्थात् जिस व्यक्ति के व्यवसाय का जो रूप होगा उसकी अभिव्यक्ति उसके चरित्र एवं व्यवहार में अवश्य प्रतिबिम्बित होगी। इनता ही नहीं पारिवारिक जीवन तथा आगामी आने वाली पीढ़ी पर भी उस व्यक्ति के व्यावसायिक व्यक्तित्व एवं चरित्र की पर्याप्त छाप पड़ती है, परिणामतः कई पीढ़ी के सदस्य सामान्यतः एक ही व्यवसाय करते नजर आते हैं। इस व्यवस्था पर वंशानुक्रण और पर्यावरण दोनों तत्वों का प्रभाव पड़ता है। प्राचीनकालीन वर्णव्यवस्था इसी परम्परा का ही परिणाम रही है। कालान्तर में भारतीय सामाजिक संरचना में लोगों के व्यवसाय निर्धारण में जाति संरचना सहयोगी भूमिका निभाने लगी। जाति विशेष में जन्म के साथ–साथ व्यक्ति के व्यवसाय का स्वरूप भी निर्धारित हो जाता था। प्रायः व्यक्ति में जातिगत व्यवसाय के अतिरिक्त दूसरे व्यवसाय को अपनाने के संस्कार

PIF/6.500 *ASVS Reg. No. AZM 561/2013-14*

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

विकसित हो नहीं पाते थे, ऐसी स्थिति में सामाजिक एवं व्यावसायिक गतिशीलता का नितान्त अभाव था। बोगेल के अनुसार कितना ही निम्न स्तर का व्यवसाय क्यों न हो परम्परागत रूप से जातीय संरचना के अन्तर्गत लोग अपने व्यवसाय को अपनाना प्रतिष्ठा का प्रतीक मानते थे (बोगेल : 1971:20)। अपने व्यवसाय को अपनाना सिद्धान्ततः भले ही प्राचीनकाल में प्रतिष्ठा का प्रतीक समझा जाता था, किन्तु इसी के साथ व्यावहारिक स्तर पर यह तथ्य भी ध्रुव सत्य है कि सामान्यतः निम्न जातियों के लोगों के समक्ष अपने व्यवसाय में संलग्न रहना उनकी विवशता होती थी। उच्च जाति के लोग इन जाति के लोगों को दूसरा व्यावसायिक प्रतिमान या अन्य आर्थिक कार्य करने ही नहीं देते थे। डूयूमा के अनुसार यद्यपि जाति तथा व्यवसाय में निश्चित सम्बन्ध है किन्तु विशेषीकरण तथा समूहों में आत्मनिर्भरता जातीय व्यवस्था की प्रमुख विशेषता है (ड्यूमा : 1966)। स्वतन्त्रता के पूर्व ही अंग्रेजों के आगमन एवं शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन से जाति तथा व्यवसाय में इस प्रकार के सम्बन्ध और आत्मनिर्भरता द्वारा व्यावसायिक गतिशीलता की भावना समाप्त हुई और जाति व्यवस्था की निरन्तरता में वृद्धि हुई, परन्तु प्राचीनकाल में तो जाति और व्यवसाय में इतना महत्वपूर्ण सम्बन्ध था कि व्यक्ति के व्यवसाय छोड़ने पर भी प्रायः वह उसी व्यवसाय के नाम से जाना जाता था (हाडग्रेव : 1969: 15, मेन्डलवाम : 1960:17)।

परम्परागत भारतीय ग्रामीण समाज में उच्च जातियो का भूमि स्वामित्व में प्रभुत्व होने के कारण उनका मुख्य व्यवसाय कृषि था, जबकि अन्य पिछड़ी जातियों प्रायः अपनी अथवा किराये की खेतीः कृषि–मजदूरी पशुपालन अथवा अन्य आर्थिक–क्रियाएं करती थी। गन्दे तथा निम्न व्यवसाय जैसे–सफाई पशुओं के खाल निकालना, उन्हें फेंकना, चमड़े सम्बन्धी कार्य इत्यादि अछूत जातियों, जिन्हें अब अनुसूचित जाति कहा जाता है, द्वारा किए जाते थे। चूँकि द्विज जातियों की सांस्कृतिक स्वच्छता, पद तथा स्थिति इन जातियों को निम्न प्रकार के गन्दे कार्य देकर सुरक्षित हो सकती थी, इसलिए प्रायः उन्हें निम्न प्रकार के कार्य दिये जाते थे जो धीरे–धीरे सामाजिक जातीय संरचना में निहित हुए (पासिन : 1955–47)। परन्तु वर्तमान समय में औद्योगीकरण, नगरीकरण तथा तकनीकी में विकास के फलस्वरूप जाति संस्था का व्यवसाय के निर्धारण में प्रमुख हाथ नहीं रह गया है, दैनिक उपयोगी की वस्तुओं का उत्पादन मशीनों द्वारा होने लगा है, जिसमें विभिन्न जातियों के लोग बिना किसी जातीय भेदभाव के लगे हुए है। पैतृक एवं जातीय व्यवसाय में लगे रहने की अपेक्षा ग्रामीण समुदाय में पेशा चुनने की स्वतन्त्रता बढ़ रही है। यद्यपि ग्रामीण सन्दर्भ में परम्परागत जातीय पेशों में आमदनी की कमी मशीनीकरण का प्रभाव इत्यादि के कारण लोग अपने पुराने व्यवसाय को छोड़कर नौकरी, व्यापार तथा विभिन्न तकनीकी व्यवसायों की तरफ उन्मुख है, किन्तु वर्तमान सामाजिक संरचना में इतने अवसर उपलब्ध नहीं हैं कि लोग मनचाहा व्यवसाय कर सके। यही कारण है कि आज भी लोग परिवर्तित परिस्थितियों में पुराने व्यवसायों को अपनाए हुए हैं। ग्रामीण समाज संरचना कृषि पर आधारित है, इसलिए पुराने व्यवसाय को अपनाने वालों में कृषकों की ही संख्या अधिक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Bopeganes, A and Kulahalli, R.N. "Cast and Ocupation in Rural India, Begi ona 1 Regi onal1 Study in Urbanization and Social change, Rural Sociology vol. 37-"
2. Bougle Calestin, Essays on the Caste system, Cambridge University press, Camb ridge, 1971.
3. Dumont, Louis : Who Hierarehicus, Vikas Publieation, Bangalore. 1966.
4. Goyal, S.K. : The Study of Scheduled Caste Students of college in Eastern U.P., Researon project. Sponsored by Indian Council of So cial Science Research, New Delhi 1973-74, Deptt, of Sociology', Banras Hindu Univer sity, Varanasi.
5. Passin H., Untouchability in the are East, "Monumenta Nippoomca, vol. x, 1955, pp. 27-47.

*****